मथुरादास की डायरी • मुद्राराक्षस

जगतराम एण्ड सन्स
मेन बाजार, गांधी नगर, दिल्ली-110031

© मुद्राराक्षस

प्रकाशक

जगतराम एण्ड संस
IX/221, मेन बाजार, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण

1992

मूल्य

पचास रुपये

मुद्रक

अजय प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

MATHURADAS KI DIARY (Humour & Stire)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अनुक्रम

परनिंदा सुख उर्फ एरिस्ट्रोक्रेट झाड़ू	7
पुरस्कार प्रसंग	10
सावधान ! आगे जनवादी रेजोमेंट है	14
अध्यक्षता का आनन्द	19
अथ श्री दिल्ली पुलिस पुराणम्	23
काशी विश्वनाथ : शासकीय नियमावली	27
विधायक बिकाऊ हैं···!	32
आलोचना के खतरे	37
ऋणंकृत्वा चर्बी पिवेत	41
पड़ता सिद्धान्त	46
चुनाव चक्र और एकता	51
उत्तर प्रदेश का कीर्तिमान	55
व्यंग्यकार की मेख	59
गरीबी की रेखा के इधर और उधर	64
समीक्षा सुख	68
टेढ़ा उल्लू	72
बड़ा क्या है : सच्चा सुख या सत्ता सुख	77
हिन्दी की शुभचिन्तक	82
ब्लैड युग की साहित्यिक हरकतें	87
बड़े बनने का गुर !	91
भारत भवन से मथुरादास की अपील	96
कम्प्यूटर क्रान्ति	101
उपदेशक की जमीन	105

समीक्षा सुख

सम्पादक जी को शिकायत रहती है कि मथुरादास अपना स्तम्भ नियमित नहीं भेजते। दरअसल यह गलती मथुरादास की नहीं है। ढाई बरस के जनता पार्टी के राज में ऐसी गड़बड़ियाँ फैल गई थीं कि हर चीज अनियमित हो गई थी। स्तम्भ भी नियमित होने में समय लगेगा। मथुरादास जादू की छड़ी मुँह में दबाकर तो पैदा नहीं हुए।

खैर, मैं यह कोशिश कर रहा हूँ कि स्तम्भ सीधे नहीं बल्कि इनसेट एक-बी के जरिए भिजवाया जाए। इनसेट के जरिए समाचार आए तो उसमें एक तरह की शान महसूस होती है। भले ही हम खिचड़ी खाएँ, लेकिन गोद में नैपकिन रखकर छुरी-काँटे से खाएँ तो एक तरह का आभिजात्य चेहरे से टपकने लगता है।

अब आप दूरदर्शन को देखिए, समाचारों के बाद एक मंसबदार बाकायदा इनसेट के सम्मान में खड़ा होकर (कायदे से उसे पहले इनसेट को आदाब बजाना चाहिए) बताता है कि इनसेट एक-बी से मिली तस्वीर के मुताबिक गरज के साथ छींटे पड़ेंगे। इसकी अपनी शान ही और है। अभी तक मौसम विभाग खबर भेज देता था कि गरज के साथ छींटे पड़ेंगे और लोग समझ लेते थे कि कुछ नहीं होने वाला, इसलिए बगैर छाते के चलो। इससे विभाग बदनाम होता था। अब गरज के साथ छींटे पड़ने की बात कृपापूर्वक इनसेट बताता है। अगर गरज के साथ छींटे न पड़े तो हमारा दुर्भाग्य। कोई हमें विलायती इतर दे जाए और हम उसे गोबर में उलट दें तो इतर का क्या कुसूर? गरज के साथ छींटे पड़ेंगे यह बात अटल होती है, क्योंकि इनसेट ने कही। नहीं पड़ते तो हमें सोच लेना चाहिए कि विघटन-कारी शक्तियाँ सक्रिय होंगी।

तो भाई, मथुरादास अब स्तम्भ इनसेट से भेजेंगे। उससे एक और लाभ

है। पोस्ट ऑफिस के लाल बम्बे में कालम का लिफाफा घुसेड़ो तो मामला कुछ देहाती-देहाती-सा लगता है। इनसेट से मामला अन्तर्राष्ट्रीय हो उठता है।

हाँ, यहाँ यह जरूर कहना चाहूँगा कि पारिश्रमिक के मामले में मथुरा-दास पिछड़े तरीकों यानी चेक के डाक द्वारा आए लिफाफे से ही सन्तोष करना पसन्द करेंगे।

खैर, यह तो विषयांतर था (पारिश्रमिक वाला प्रसंग नहीं)। सूचना यह देनी थी कि मथुरादास बाकायदा आलोचना के मैदान में आने वाले हैं। इस वक्त साहित्य की बड़ी दुर्दशा है। जब तक अच्छा आलोचक साहित्य के फटे में टाँग नहीं अड़ाएगा, साहित्य फटता ही जाएगा। टाँग अड़ जाने पर साहित्य को फाड़ते रहने वाले साहित्यकारों की हरकतें कम होने लगती हैं।

आलोचक होने में लाभ अनेक हैं, हानि कोई नहीं। अगर आप आलोचक हैं तो सबसे पहले तो आप लोगों को डरा सकते हैं। साहित्यकार पुलिस के सिपाही से भी उतना नहीं डरता, किसी बदमाश से भी कम ही डरता है क्योंकि बदमाश खुद कविता से कतराकर निकलना पसन्द करता है। साहित्यकार चोर-डकैत से भी नहीं डरता। डरता है तो सिर्फ आलोचक से।

साहित्यकार को डराने के लिए आलोचक के पास कई हथियार होते हैं। पहला हथियार तो यह कि वह किसी भी लेखक की किताब की समीक्षा करते हुए वह उसे बकवास सिद्ध कर सकता है। इसके लिए किताब पढ़ने की जहमत उठाना भी कोई जरूरी नहीं। दूसरा खासा मारक हथियार चुप्पी होता है। आप दस लेखकों का जिक्र करें और ग्यारहवें के बारे में चतुराई के साथ सन्नाटा खींच जाएँ या उसे इत्यादि वाली श्रेणी में शामिल कर दें। आपका हथियार चल गया।

लोगों ने इधर समीक्षा और आलोचना के इस शूरतापूर्ण कार्य को काफी आसान भी बना लिया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के जमाने में समीक्षा करना कुछ ऐसा कष्टसाध्य काम था, जैसे पैदल चारों धाम घूमना। अगर कोई चारों धाम की तस्वीरें अपने कमरे में लटका ले और बारी-बारी से उन्हें झाँक आए तो यह यात्रा कितनी सहज और सुखद हो जाती है।

चतुर आलोचक अपने चारों धाम अपने कमरे में ही बना लेता है। बहुत-से झंझट तो इधर कवियों ने खुद कम कर दिये हैं। रत्नाकर पर लिखने के लिए छन्द से लेकर ध्वनि अलंकार और रस जैसी बहुत-सी बेकार की बातें जानना जरूरी हो जाता था। कबीर जैसा कोई गड़बड़ कवि पल्ले पड़ जाए तो दर्शन, इतिहास जैसी तमाम दूसरी बातें जाननी पड़ जाती थीं।

अब मामला इसीलिए बहुत सीधा कर लिया गया है। आलोचना के लिए बाकी कुछ पढ़ना तो जरूरी नहीं ही है, आप जिसकी आलोचना कर रहे हों, उसकी भी किताब न पढ़ें तो भी काम चल सकता है। बल्कि साहित्य समीक्षा में आप साहित्य भी न छुएँ तो भी मजे में आलोचना लिख सकते हैं।

आप कहेंगे, ऐसी आलोचना कैसी होती है। मैं बताता हूँ। मान लीजिए मथुरादास 'डेनमार्क के साए' नामक किसी उपन्यास की समीक्षा करना चाहते हैं। वे कुछ इस तरह लिखेंगे।

'लेखक जीवन के अंतरंग के आतंक को झेलता हुआ असन्तुलित सम्बन्धों की कुछ बुनियादी सचाइयों के मानक प्रस्तुत करके समय की पड़ताल करता है। इस प्रक्रिया में उस पर जो रचनात्मक दबाव होते हैं, वही उसके युगबोध की साक्षी देते हैं। रचनागत तनाव अनुभूतिपरक तनाव के बीच से उभरता है और कृतिकार मानवीय नियति में हस्तक्षेप करके मूल्यों से साक्षात् करता है। प्रस्तुत रचना 'डेनमार्क के साए' ऐसे ही अनुभवों का रेखांकित दस्तावेज है। इत्यादि।'

क्या समझे आप? मैं भी कुछ नहीं समझा और मथुरादास भी कुछ नहीं समझते। ऐसी समीक्षा समझी नहीं भोगी जाती है। बल्कि इसका आस्वादन किया जाता है। इससे आप न सिर्फ लेखक को बल्कि दूसरे समीक्षकों को भी चक्कर में डाल सकते हैं।

इसका सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि यह न तो किताब को स्वीकार करती है न अस्वीकार। न उसे बुरी बताती है, न अच्छी। लेखक के दुश्मन इस समीक्षा को किताब की निन्दा मानकर खुश हो सकते हैं और मित्र इसे तारीफ समझकर सुखी होंगे।

ऐसी समीक्षा लिखने के बाद अगर आप सुरती खाने की आदत डाल लें तो और ज्यादा मजे में रहेंगे।

समीक्षक की माँग अध्यक्षता और प्रवचन के लिए सहसा बढ़ जाती है। ऐसे में रवायती समीक्षक झंझट में फँस सकता है। उसे भाषण से पहले होम-वर्क भी करना हो सकता है। नया समीक्षक इस परेशानी से बचा रहता है। वह नेता की तरह से कहीं भी और कभी भी प्रभावशाली भाषण देने को तैयार रहता है।

नेता को आप साहित्य समारोह के उद्घाटन के लिए बुलाएँ (परसाई से क्षमा-याचना सहित) तो भी वह कहेगा, देश के सामने बड़े संकट हैं। विघटनकारी शक्तियाँ सिर उठा रही हैं। उसे पुल के उद्घाटन के लिए बुलाएँ तो भी विघटनकारी शक्तियों की ही याद दिलाएगा। कभी-कभी वह इससे भी आगे बढ़ सकता है।

बाराबंकी उत्तर प्रदेश में एक जिला है। जी हाँ, वही किशनचन्दर की सरगुजस्त (मेरा मतलब उनके गधे की सरगुजस्त) वाला। वहाँ एक बार रफी अहमद किदवई साहब का जन्मदिन मनाया जा रहा था। जो नेता उस उत्सव का उद्घाटन करने गए, वे बोले: हमें गर्व है कि बाराबंकी में मोहम्मद रफी जैसा बेजोड़ गायक पैदा हुआ।

समीक्षक साहित्य में भी यह हरकत कर सकते हैं। उन्हें कोई टोकेगा नहीं। टोकने की हिम्मत ही नहीं होगी। इसीलिए मथुरादास अब बाकायदा हिन्दी समीक्षा में टाँगक्षेप करने वाले हैं।